एम.एच.डी.–03
उपन्यास एवं कहानियाँ
सत्रीय कार्य
(सभी खंडों पर आधारित)

पाठ्यक्रम कोड : एम.एच.डी.–3
सत्रीय कार्य कोड : एम.एच.डी.–3/टी.एम.ए./2023–2024
कुल अंक : 100

सभी प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. 'गोदान' के आधार पर प्रेमचंद की जनतांत्रिक दृष्टि का सोदाहरण विवेचन कीजिए। 10
2. 'सूखा बरगद' उपन्यास के आधार पर भारतीय मुसलमानों के भीतर असुरक्षा के डर के कारणों का सोदाहरण विश्लेषण कीजिए। 10
3. 'धरती धन न अपना' उपन्यास के प्रमुख पुरुष और स्त्री पात्रों पर विचार कीजिए। 10
4. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने भारतीय जीवन को किस रूप में चित्रित किया है? सोदाहरण वर्णन कीजिए। 10
5. 'मैला आंचल' एक आंचलिक उपन्यास है, उदाहरण देकर सिद्ध कीजिए। 10
6. उदाहरण देकर समझाइए कि 'रोज़' कहानी में मध्यवर्गी स्त्री के जीवन यथार्थ का चित्रण हुआ है। 10
7. 'पाजेब' कहानी के आधार पर मध्यवर्गीय मानसिकता और बदल रहे नैतिक मूल्यों पर प्रकाश डालिए। 10
8. ''यशपाल मूलतः मध्यवर्गीय लेखक हैं।'' कुत्ते की पूछ' कहानी के आधार पर उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए। 10
9. 'ठाकुर का कुआँ' कहानी के आधार पर अस्पृश्यता की समस्या का वर्णन कीजिए। 10
10. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए :

(क) जयशंकर प्रसाद की राष्ट्रीय भावना 5

(ख) किसानों के प्रति प्रेमचंद की दृष्टि 5

एम.एच.डी.-03
उपन्यास एवं कहानियाँ

पाठ्यक्रम कोड: एम.एच.डी.-3
सत्रीय कार्य कोड: एम.एच.डी.- 3/ टी.एम.ए./2023-2024
कुल अंक: 100

अस्वीकरण/विशेष नोट: ये सत्रीय कार्य में दिए गए कुछ प्रश्नों के उत्तर/समाधान के नमूने मात्र हैं। ये नमूना उत्तर/समाधान निजी शिक्षक/शिक्षक/लेखकों द्वारा छात्र की सहायता और मार्गदर्शन के लिए तैयार किए जाते हैं ताकि यह पता चल सके कि वह दिए गए प्रश्नों का उत्तर कैसे दे सकता है। हम इन नमूना उत्तरों की 100% सटीकता का दावा नहीं करते हैं क्योंकि ये निजी शिक्षक/शिक्षक के ज्ञान और क्षमता पर आधारित हैं। सत्रीय कार्य में दिए गए प्रश्नों के उत्तर तैयार करने के संदर्भ के लिए नमूना उत्तरों को मार्गदर्शक/सहायता के रूप में देखा जा सकता है। चूंकि ये समाधान और उत्तर निजी शिक्षक/शिक्षक द्वारा तैयार किए जाते हैं, इसलिए त्रुटि या गलती की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता है। किसी भी चूक या त्रुटि के लिए बहुत खेद है, हालांकि इन नमूना उत्तरों / समाधानों को तैयार करते समय हर सावधानी बरती गई है। किसी विशेष उत्तर को तैयार करने से पहले और अप-टू-डेट और सटीक जानकारी, डेटा और समाधान के लिए कृपया अपने स्वयं के शिक्षक/शिक्षक से परामर्श लें। छात्र को विश्वविद्यालय द्वारा प्रदान की गई आधिकारिक अध्ययन सामग्री को पढ़ना और देखना चाहिए

सभी प्रश्नों के उत्तर दीजिए।

1. 'गोदान' के आधार पर प्रेमचंद की जनतांत्रिक दृष्टि का सोदाहरण विवेचन कीजिए।

प्रसिद्ध हिंदी लेखक प्रेमचंद ने अपने उपन्यास "गोदान" (द गिफ्ट ऑफ ए काउ) में विभिन्न सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों के चित्रण के माध्यम से एक लोकतांत्रिक दृष्टि का चित्रण किया। उपन्यास प्रचलित सामाजिक व्यवस्था की उनकी आलोचना को दर्शाता है और न्याय, समानता और सामाजिक सुधारों की आवश्यकता पर प्रकाश डालता है। यहाँ कुछ उदाहरण हैं जो "गोदान" में प्रेमचंद की लोकतांत्रिक दृष्टि को स्पष्ट करते हैं:

जाति व्यवस्था की आलोचना: "गोदान" गहरी जड़ें जमा चुकी जाति व्यवस्था और उसकी दमनकारी प्रकृति को संबोधित करता है। प्रेमचंद निम्न जाति के व्यक्तियों द्वारा सामना किए जाने वाले भेदभाव और सामाजिक स्वीकृति के लिए उनके संघर्ष को उजागर करते हैं। उदाहरण के लिए, एक गरीब किसान होरी का चरित्र, निचली जाति का है और पूरे उपन्यास में हाशिए और शोषण का सामना करता है। प्रेमचंद जाति व्यवस्था के निहित अन्याय पर प्रकाश डालते हैं और समानता और सामाजिक न्याय की आवश्यकता पर बल देते हुए इसके उन्मूलन की वकालत करते हैं।

उपेक्षित वर्गों के लिए सहानुभूति प्रेमचंद अपने पात्रों के माध्यम से उपेक्षित समूहों की दुर्दशा के प्रति सहानुभूति व्यक्त करते हैं। वह समाज में भूमिहीन मजदूरों, गरीब किसानों और शोषित महिलाओं के संघर्षों को चित्रित करता है। उदाहरण के लिए, होरी की बहू धनिया का चरित्र, पितृसत्तात्मक मानदंडों और एजेंसी की अनुपस्थिति के कारण महिलाओं द्वारा सामना किए जाने वाले उत्पीड़न का प्रतिनिधित्व करता है। प्रेमचंद का चित्रण सहानुभूति जगाता है और समाज के इन वंचित वर्गों के उत्थान और सशक्तिकरण की आवश्यकता पर प्रकाश डालता है।

औपनिवेशिक शासन की आलोचना: "गोदान" ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन की शोषक प्रकृति की भी आलोचना करता है। प्रेमचंद अंग्रेजों द्वारा लगाए गए दमनकारी भू-राजस्व प्रणाली को

चित्रित करते हैं, जो किसानों की गरीबी और पीड़ा को और बढ़ा देती है। उपन्यास आर्थिक शोषण और ग्रामीण समुदायों द्वारा सामना की जाने वाली भूमि के नुकसान को उजागर करता है, स्व-शासन और सामाजिक-आर्थिक सुधारों की आवश्यकता पर बल देता है।

शिक्षा और जागरूकता पर जोर प्रेमचंद सामाजिक परिवर्तन को बढ़ावा देने में शिक्षा और जागरूकता के महत्व को रेखांकित करते हैं। वह इस बात पर जोर देता है कि व्यक्तियों को अपने अधिकारों को समझने, दमनकारी व्यवस्थाओं को चुनौती देने और लोकतांत्रिक प्रक्रिया में सक्रिय रूप से भाग लेने के लिए शिक्षा महत्वपूर्ण है। गोबर, होरी के बेटे जैसे चरित्र, सामाजिक बाधाओं से मुक्त होने के साधन के रूप में शिक्षा और ज्ञान प्राप्त करने वाली युवा पीढ़ी का प्रतिनिधित्व करते हैं।

मानवतावाद और करुणा: "गोदान" प्रेमचंद की मानवतावादी दृष्टि को दर्शाता है, करुणा, सहानुभूति और साझा मानवता की मान्यता पर बल देता है। वह ऐसे चरित्रों को चित्रित करते हैं जो सामाजिक और आर्थिक बाधाओं को पार करते हुए दया, समझ और एकजुटता प्रदर्शित करते हैं। उदाहरण के लिए, एक वेश्या, झुनिया के चरित्र को होरी से सहानुभूति और समर्थन प्राप्त होता है, जो करुणा के महत्व और सामाजिक पूर्वाग्रहों को तोड़ने पर प्रकाश डालता है।

इन उदाहरणों के माध्यम से "गोदान" प्रेमचंद की लोकतांत्रिक दृष्टि को प्रस्तुत करता है, सामाजिक न्याय, समानता और वंचित समुदायों के सशक्तिकरण की वकालत करता है। उपन्यास एक अधिक समावेशी समाज की मांग करता है, जहां व्यक्तियों को उनकी जाति या सामाजिक स्थिति के बावजूद सम्मान के साथ व्यवहार किया जाता है। यह न्यायपूर्ण और समतावादी समाज को बढ़ावा देने में शिक्षा, करुणा और जागरूकता की परिवर्तनकारी शक्ति में प्रेमचंद के विश्वास को दर्शाता है।

2. 'सूखा बरगद' उपन्यास के आधार पर भारतीय मुसलमानों के भीतर असुरक्षा के डर के कारणों का सोदाहरण विश्लेषण कीजिए।

हाल ही में हिन्दी के सुप्रसिद्ध साहित्यकार मंजूर एहतेशाम का निधन होने से स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य के एक विशिष्ट अध्याय का अंत हो गया. उनका जन्म 4 अप्रैल को भोपाल में हुआ था और वहीं पर उन्होंने अपनी अंतिम सांस भी ली. उन्होंने अनेक उपन्यास, कहानियां व नाटक लिखे जिनके लिए उन्हें सम्मानित किया गया. उनकी प्रमुख कृतियों में से एक सूखा बरगद उपन्यास उनके बाह्य और आंतरिक संसार का एक विशिष्ट प्रतिबिम्ब रहा है जिसके लिए उन्हें श्रीकान्त वर्मा स्मृति सम्मान और भारतीय भाषा परिषद कलकत्ता का सम्मान प्राप्त हुआ. यह उपन्यास विभाजन के बाद के दौर को याद करते हुए तत्कालीन घटनाओं और माहौल का वर्णन करता है और साथ ही में 1971 में भारत-पाकिस्तान के युद्ध के समय की घटनाओं को भी समेटे हुए है. उपन्यास की कहानी इसके प्रमुख पात्र रशीदा और सुहेल के माध्यम से देश के वातावरण के युवा वर्ग पर पड़ने वाले प्रभाव पर टिप्पणी करती है. सूखा बरगद में मुस्लिम समाज के मानसिक द्वन्द को व्यक्त किया गया है, जिसमें लेखक के समकालीन अनुभवों का आभास मिलता है जिससे उपन्यास के पात्रों की सोच और संघर्षों को एक स्पष्टता मिलती है. वर्तमान माहौल को देखते हुए यह उपन्यास आज के समय में भी प्रासंगिक है. उपन्यास की कहानी भोपाल के एक शिक्षित मुस्लिम परिवार पर आधारित

है जिसके सदस्यों के माध्यम से देश में अल्पसंख्यक समुदाय को पेश आने वाली समस्याओं का चित्रण किया गया है. मन्जूर एहतेशाम ने दोनो पक्षों के झगड़े के पीछे राजनीतिक मंसूबों को रेखांकित किया है. साथ ही उन्होंने हिन्दू-मुस्लिम समुदायों में धार्मिक कट्टरता का अनेक स्थानों पर उल्लेख किया है. हालांकि यह कहानी अपने में विभिन्न आयाम समेटे हुए है पर इस लेख में सामाजिक पहचान की प्रतिक्रिया-स्वरूप थोपे जाने वाले अपराध-बोध एवं परायेपन को विशेष रूप से रेखांकित किया गया है. एहतेशाम कहीं-न-कहीं मुसलमानों में व्याप्त अजनबीपन और असुरक्षा की भावना से बेचैन हैं. उपन्यास के अनेक प्रसंगों से यह स्पष्ट होता है. लेखक ने सुहेल के माध्यम से भारत की धर्मनिरपेक्ष लोकतांत्रिक प्रणाली में औपचारिक अवसरों पर एक विशेष समुदाय की सांस्कृतिक रीतियों जैसे कि भूमि-पूजन, संस्कृत के गीत एवं पाठ आदि के प्रचलन का उल्लेख करते हुए देश के लोकतांत्रिक मूल्यों पर सवाल उठाया है. "हम हिंदी तक राजी हुए तो कहने लगे अब तो तुम्हें संस्कृत भी सीखनी पड़ेगी! क्या होगा इस मुल्क में मुसलमानों का!" सुहेल के इस कथन के माध्यम से लेखक ने मुसलमानों में व्याप्त असुरक्षा की भावना को इन्गित किया है. लगातार अपनी वफादारी और सच्चाई पर प्रश्नचिन्ह लगाए जाने को लेकर मुस्लिम समाज के लोगों को पहुंचने वाली ठेस और उद्विग्नता को एहतेशाम ने इस उपन्यास में अनेक स्थान पर उजागर किया है. कहानी में सन् 71 के हिन्दुस्तान-पाकिस्तान युद्ध के दौरान पाकिस्तान में बसे अपने रिश्तेदारों के लिए चिंतित भारतीय मुसलमानों की परेशानियों का वर्णन किया गया है. युद्ध के संकटपूर्ण हालात में भी स्वजनों के लिए खुलकर चिंता व्यक्त नहीं कर पाने की विवशता को रशीदा के परिवार के माध्यम से दर्शाया गया है. भयग्रस्त परिस्थितियों में अपनों की चिंता करना एक सहज मानवीय स्वभाव है लेकिन इसके कारण खुद को संदेह की दृष्टि से देखा जाना कहीं-न-कहीं उन्हें आक्रोश से भर देता है. मंजूर एहतेशाम ने बरगद के पेड़ के माध्यम से सुहेल की मनोदशा में उसकी पुरानी याद और वर्तमान के आभास के वैषम्य को बहुत संवेदना से व्यक्त किया है. जिस हिन्दुस्तान को वह एक हरे-भरे बरगद के रूप में देखता था और जिसकी छाया में उसे शान्ति मिलती थी अब वही बरगद का पेड़ प्रेम रूपी जल के अभाव में सूख गया है जहां छाया की अपेक्षा शरीर को झुलझाने वाली गर्मी और एक वीरानापन है. अब उसके लिए हिन्दुस्तान एक सूखा बरगद हो चुका था. सुहेल एक ऐसा मुस्लिम युवक था जिसे हिन्दुस्तान से लगाव था और जहां रहते हुए उसके मन में कोई असुरक्षा की भावना नहीं आती थी. वह सभी समुदायों के बारे में निष्पक्ष विचार रखता था लेकिन प्रतिकूल वातावरण के प्रबल होने के कारण उसके मन में हिन्दुओं के प्रति असुरक्षा और हताशा की भावना उत्पन्न होती गई. उपन्यास में एक स्थान पर वह सोचता है, "मुसलमान ज्यादा-से-ज्यादा चाहता क्या है? क्या बराबरी के साथ मुल्क में रहना भी न चाहे." एहतेशाम ने तत्कालीन सामाजिक अराजकता और क्रूरता को सुहेल के प्रस्तुत संवाद के माध्यम से इंगित किया है- "जमशेदपुर करबला बना हुआ है- मुसलमानों को मार-मारकर नास कर डाला है. वह जो एक राईटर था- हिन्दू-मुसलमान भाई-भाई की थीम पर उर्दू में जिंदगी-भर कहानियां लिखता रहा, उसे भी निपटा दिया! अखबार में उसकी छोटी सी तस्वीर छपी है."

3. "धरती धन न अपना' उपन्यास के प्रमुख पुरुष और स्त्री पात्रों पर विचार कीजिए।

जगदीश चंद्र द्वारा प्रकाशित उपन्यास 'धरती धन न अपना' 1972 में प्रकाशित हुई थी। इस उपन्यास में जगदीश चंद्र ने पंजाब के दोआबा क्षेत्र के दलित जीवन की त्रासदी को चित्रित क्या है। मुख्य गांव से बहिष्कृत बस्ती चमादडी में बसने वाली चमार जाति की असहनीय पीड़ा को लेखक ने यथार्थ की भूमि पर प्रस्तुत किया है। पर ऐसा नहीं है कि सिर्फ पंजाब में ही दलितों की स्थिति ऐसी

है बल्कि ऐसी स्थिति हमें संपूर्ण भारत में दिखाई देती है। इस उपन्यास की कहानी दो पात्रों काली और ज्ञानो के इर्द गिर्द घूमती हुई दिखाई पड़ती है। यह दोनों पात्र दलित वर्ग से ही है। उपन्यास की कहानी एक अंचल विशेष की कहानी है जिसे पढ़ते हुए हमें ऐसा प्रतीत होता है कि गांव हमारी आंखों के सामने है और हम एक-एक घटना को देख और महसूस कर रहे हैं। जगदीश चंद्र के शब्दों में – "मेरा यह उपन्यास मेरी किशोरावस्था की कुछ अविस्मरणीय स्मृतियों और उनके दामन में छिपी एक अदम्य वेदना की उपज है।"
काली और उसका पूरा दलित वर्ग दलित होने का द्वंश झेलता है। उच्च वर्गों के द्वारा दलितों का शोषण किया जाता है कभी मारा तो कभी असहनीय दर्द और पीड़ा झेलने पर मजबूर किया जाता है। उनकी स्त्रियों के साथ शोषण किया जाता है। पर उन स्त्रियों को बोलने का भी हक नहीं होता कि वह अपनी रक्षा के खातिर आवाज उठा सके। उन्हें मंदिरों में प्रवेश से भी वंचित रखा जाता है। इतना ही नहीं उन्हें कुएं से पानी लेने का भी अधिकार नहीं होता है। उन्हें समाज से अलग और अछूत समझा जाता है। गावों में दलित जाति के लिए गांव से थोड़ा हटकर एक मोहल्ला होता है। जगदीश चंद्र ने अपने इस उपन्यास में ज्ञानो और काली के माध्यम से दलित जाति में प्रेम संबंध को भी दिखाने का प्रयास किया है। इस उपन्यास को अंत तक पढ़ने के बाद ऐसा प्रतीत होता है कि दलित जाति के लिए प्रेम करना भी एक बड़े अपराध से कम नहीं है। ऐसा लगता है कि दलित जाति में प्रेम का अंत ही मौत होता है। काली और ज्ञानो का प्रेम संघर्ष और उनकी दुखद परिणति इस उपन्यास के अंत में दिखाई पड़ता है। ज्ञानो को उसकी मां के हाथों जहर देकर मार देना उसके बाद काली का कुछ पता न चलना। ऐसी-ऐसी अनगिनत घटनाएं हमें इस उपन्यास में दिखाई पड़ती है जिसे पढ़ने पर हमारा कलेजा कांप उठता है की हमारे समाज में ऐसे भी लोग रहते हैं जो मानव होकर भी मानव पर ही अत्याचार करते हैं।

4. 'बाणभट्ट की आत्मकथा' में हजारी प्रसाद द्विवेदी जी ने भारतीय जीवन को किस रूप में चित्रित किया हैं? सोदाहरण वर्णन कीजिए।

बाणभट्ट की आत्मकथा आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी रचित एक ऐतिहासिक हिन्दी उपन्यास है। इसमें तीन प्रमुख पात्र हैं- बाणभट्ट, भट्टिनी तथा निपुणिका। इस पुस्तक का प्रथम प्रकाशन वर्ष 1946 में राजकमल प्रकाशन ने किया था। इसका नवीन प्रकाशन 1 सितम्बर 2010 को किया गया था। यह उपन्यास आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी की विपुल रचना-सामर्थ्य का रहस्य उनके विशद शास्त्रीय ज्ञान में नहीं, बल्कि उस पारदर्शी जीवन-दृष्टि में निहित है, जो युग का नहीं युग-युग का सत्य देखती है। उनकी प्रतिभा ने इतिहास का उपयोग 'तीसरी आँख' के रूप में किया है और अतीतकालीन चेतना-प्रवाह को वर्तमान जीवनधारा से जोड़ पाने में वह आश्चर्यजनक रूप से सफल हुई है। बाणभट्ट की आत्मकथा अपनी समस्त औपन्यासिक संरचना और भंगिमा में कथा-कृति होते हुए भी महाकाव्यत्व की गरिमा से पूर्ण है। इस उपन्यास में द्विवेदी जी ने प्राचीन कवि बाणभट्ट के बिखरे जीवन-सूत्रों को बड़ी कलात्मकता से गूँथकर एक ऐसी कथाभूमि निर्मित की है जो जीवन-सत्यों से रसमय साक्षात्कार कराती है। इसका कथानायक कोरा भावुक कवि नहीं वरन कर्मनिरत और संघर्षशील जीवन-योद्धा है। उसके लिए 'शरीर केवल भार नहीं, मिट्टी का ढेला नहीं', बल्कि 'उससे बड़ा' है और उसके मन में आर्यावर्त्त के उद्धार का निमित्त बनने की तीव्र बेचैनी है। 'अपने को निःशेष भाव से दे देने' में जीवन की सार्थकता देखने वाली निउनिया और 'सबकुछ भूल जाने की साधना' में लीन महादेवी भट्टिनी के प्रति उसका प्रेम जब उच्चता का वरण कर लेता है तो यही गूँज अंत में रह जाती है- वैराग्य क्या इतनी बड़ी चीज है कि प्रेम देवता को उसकी नयनाग्नि में भस्म

कराके ही कवि गौरव का अनुभव करे? 'बाणभट्ट की आत्मकथा' हर्षकालीन सभ्यता एवं संस्कृति का जीवन्त दस्तावेज है। ऐतिहासिक उपन्यासकार को अतीत में भी प्रवेश करना पड़ता है। अतीत में प्रविष्ट हो कर ही इतिहास को वर्तमान संदर्भो के साथ जोड़ पाता है। इसी जुड़ाव के माध्यम से ऐतिहासिक उपन्यासकार अतीत को चित्रित करता है।

पात्र

बाणभट्ट(भट्ट)- असली नाम दक्ष
निउनिया- निपुणिका का प्राकृत नाम
भट्टिनी- देवपुत्र तुवरमिलिंद की कन्या

इस उपन्यास के माध्यम से हजारीप्रसाद द्विवेदी के स्त्री संबंधी विचारों को भी समझने में सहायता मिलती है। निउनिया को उज्जयिनी की नाटक-मंडली में भर्ती करने के पश्चात् भट्ट सोचता है कि- "साधारणतः जिन स्त्रियों को चंचल और कुलभ्रष्टा माना जाता है उनमें एक दैवी शक्ति भी होती है, यह बात लोग भूल जाते हैं। मैं नहीं भूलता। मैं स्त्री-शरीर को देव-मंदिर के समान पवित्र मानता हूँ।"हजारी प्रसाद द्विवेदी एक ऐतिहासिक उपन्यासकार के रूप में ही जाने जाते हैं। 'बाणभट्ट की आत्मकथा' उपन्यास हजारी प्रसाद द्विवेदी द्वारा लिखित पहला ऐतिहासिक उपन्यास है। इस उपन्यास का प्रकाशन 1946 में हुआ था। यह उपन्यास हर्षकालीन सभ्यता एवं संस्कृति का जीता जागता दस्तावेज है। यह उपन्यास इतिहास और कल्पना का बहुत ही सुंदर समन्वय है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह दोनों एक दूसरे के पूरक हो। इस उपन्यास का संबंध संस्कृत के प्रसिद्ध कवि बाणभट्ट से है। इस उपन्यास में सातवीं शताब्दी के हर्ष युग के राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक और धार्मिक स्थिति के ऐतिहासिक तत्वों पर प्रकाश डाला गया है। इस उपन्यास में प्रमुख तीन पात्र हैं- बाणभट्ट, भट्टिनी तथा निपुणिका, राज्यश्री, कुमार वर्धन, सुचरिता। यह सभी पात्र कथानक के विकास में अहम भूमिका निभाते हुए जान पड़ते हैं। इसके साथ ही इसमें काल्पनिक पात्र भी हैं। हजारी प्रसाद द्विवेदी ने प्राचीन कवि बाणभट्ट के जीवन को बहुत ही कलात्मकता से गूँथ कर एक ऐसी कथाभूमि निर्मित की है जो जीवन सत्यों से रसमय साक्षात्कार कराती है। द्विवेदी जी ने इस उपन्यास की रचना मध्यकालीन इतिहास के एक छोटे से कालखंड को आधार बनाकर की है। इस उपन्यास में सातवीं शताब्दी का इतिहास और समाज का जीवंत चित्रण प्रस्तुत हुआ है। इस उपन्यास की केंद्रीय समस्या बाणकालीन राजवंशीय इतिहास को प्रस्तुत करने की नहीं है, बल्कि मुख्य समस्या है भट्टिनी(प्रभावशाली चरित्र)की रक्षा करना। जो भट्टिनी नारी की गरिमा, उदारता, समस्त भारतीयता और अपने समाज की आस्था का प्रतीक है। नारी सम्मान की रक्षा का भाव इस उपन्यास का मूल केंद्र है। "हजारी प्रसाद द्विवेदी में कारयित्री प्रतिभा के कारण ही उच्च कोटि के भावयित्री प्रतिभा भी है।" यहां द्विवेदी जी के संबंध में डॉ.हरदयाल का यह कथन बिल्कुल उचित जान पड़ता है। " 'बाणभट्ट की आत्मकथा' ऐतिहासिक उपन्यास के दायित्व को निबाहने में पूर्णता समर्थ है।"

5.'मैला आंचल' एक आंचलिक उपन्यास है, उदाहरण देकर सिद्ध कीजिए।

अंचल विशेष का गुण धर्म आंचलिकता है। आंचलिक रचनाएँ अंचल विशेष के रीतिरिवाज, रहन-सहन वेश-भुशा, सपने एवं अभिलाषाओं का जीवन्त दस्तावेज होती है लेकिन इससे यह ध्वनि नहीं

निकलती की अंचल के सभी प्राणियों का जीवन एक रस एक रूप होता है। यहाँ भी एक की अभिलाषाएँ दूसरे की अभिलाषाओं से टकराती है। एक का प्रेम दूसरे की घृणा का विषय बनता है। इंसानियत, हैवानियत, दया, प्रेम घृणा को लेकर यहाँ भी घात-प्रतिघात चलता रहता है। स्थानीय रंगत, रीति-रिवाज, रहन-सहन को किसी रचना पर आच्छादित कर देने मात्र से आंचलिक उपन्यास पुरा नहीं हो जाता। आंचलिकता सिर्फ वाह्य रंगों में नहीं है और न हीं अंचल विशेष की चौहदी के सर्वेक्षण में, आंचलिकता अंचल विशेष के चिरत्रों के यथार्थ अंकन में है। आंचलिकता राष्ट्रीयता का विलोम नहीं है। अंचल राष्ट्र से निर्पेक्ष नहीं होता। अंचल या जनपद भी राष्ट्र का ही अंग होता है। जिस तरह अंचल का नाम लेने से राष्ट्र खंडित नहीं होता उसी तरह आंचलिकता से राष्ट्रीयता के टुकड़े नहीं होते। रेणु जी शुष्क जीवन में भी रस तलाशने वाले, लोक संस्कृति के महागायक हैं। उनका कथाकार व्यक्तित्व लोक कला, लोक कथा लोक संस्कृति और लोक गीतों के तत्वों से बुना हुआ है। लोक जीवन के स्वभाव और संस्कार से वे परिचित हैं। वे स्थानीय लोक जीवन में ही डुबकर अपने चरित्रों को गढ़ते चलते हैं। लोक जीवन से जुड़ाव और अपने क्षेत्र से गहरी आत्मीयता हीं उनकी ताकत है। इसी आधार पर वे आंचलिक जीवन और समस्याओं का साक्षात्कार करते हैं। अपनी लोक कथा और लोक चेतना के बल पर हीं वे ढ़ाई-तीन वर्षों के काल को उपन्यास में जिस तरह बांधा है वह शताब्दियों को अपने कथा फलक पर उतारने वाले रचनाकारों के लिए ईर्ष्या का विषय है। आंचलिकता सामान्यता में नहीं विशिष्टता में है। जो सामान्य, टाइप से भिन्न है वही विशिष्ट है। रेणु जी के मैला आंचल का मेरीगंज गाँव सामंती व्यवस्था में जकड़ा हुआ, गरीबी और जहालत में सांस लेता हुआ, अंधविश्वासों में दम तोड़ता हुआ सामान्य गाँव हीं है अन्य गाँवों की तरह , लेकिन रेणु जी पुर्णिया की बोली-वाणी, वहाँ के रीति-रिवाज, मिथक और लोक संस्कृति का प्रयोग कर इस गाँव को अन्य गाँवों से भिन्न और विशिष्ट बना देते हैं। इसकी आंचलिकता अन्य गाँवों से इसकी भिन्नता में ही निहित है। दूसरी बात यह कि रेणु जी ने हिन्दी उपन्यास को परम्परागत नायक से मुक्ति दिलायी। आंचलिक उपन्यास में व्यक्ति नायक नहीं होता, पूरा अंचल हीं नायक होता है। मैला आंचल में भी मेरीगंज हीं अपनी विशेषताओं के साथ नायक है। रेणु ने इसकी भूमिका में लिखा, "कथानक है पूर्णिया मैंने इसके एक हिस्से के एक ही गाँव को पीछड़े गाँव का प्रतीक बनाकर इस उपन्यास कथा का क्षेत्र बनाया है।" रेणु जी इस अंचल के सरल जटिल संश्लिष्ट जीवन का अनेकानेक चित्र देकर पीछड़े गाँव, पीछड़े वर्ग और जिंदगी की दौर में पिछड़ गए लोगों को कथा के केन्द्र में ले आते हैं। उन्होंने अंचल से जुड़े हुए जीवन को इस तरह चित्रांकित किया है कि पूरा अंचल मोहक कलाकृतियों से अटा एक बड़ा कैनवास दिखाई पड़ने लगता है। इस कैनवास पर उभरे चित्र हृदयग्राही भी हैं और हृदयविदारक भी। आंचलिक उपन्यास आंदोलन की शुरूआत मैला आंचल से होती है। लेकिन यही उपन्यास उस आंदोलन- की चरम उपलब्धि भी है। यह आंचलिक आंदोलन गाँवों के उपेक्षित सामुहिक जीवन को साहित्यिक चिंता के केन्द्र में लाने के कारण क्रान्तिकारी आंदोलन था। रघुवीर सहाय हिन्दी के आंचलिक आंदोलन से पैदा हुयी आंचलिक रचनाओं की लोकप्रियता की तुलना रूसी साहित्य की पोवेस्त्र (उपन्यास) की प्रसिद्धि से करते हैं। उन्होंने बताया की दोनों आंदोलन गाँव जाकर मानवीय अनुभव न्याय और नैतिकता की खोज करते हैं। उनके अनुसार यह आंदोलन भद्र लोग (अभिजात्य वर्ग) के राजनीतिक चरित्र के विरूद्ध प्रतिक्रिया रूप में जनमानस में उपजी वितृष्णा की अभिव्यक्ति था। रूस में सन् 60 के आसपास सामुहिक खेती के बाद वाले दौर में आंचलिक आंदोलन का उदय हुआ। रूसी हिन्दी आंचलिक उपन्यासों में समान बात यह है कि दोनों सामाजिक राजनीतिक हृदयहीनता के विरूद्ध घृणा व्यक्त करते हैं। दोनों ने नयी नैतिकता की उम्मीद जगायी। रघुवीर सहाय ने रेणु के मैला आंचल और परती परीकथा की तुलना वलेनतीन रसपुतीन के उपन्यास 'मयोरा से विदायी और

अंतिमघड़ी' से करते हुए कहाः ''कि दोनों लेखक परिवार और समाज के प्रति कर्मठ लगाव और निष्ठा दिखाते हैं। दोनों गाँव की ओर विश्राम या मनोरंजन के लिए नहीं जाते, लोकतंत्र के जड़ों की खोज में जाते हैं। दोनों में आंचलिक होना ग्रामीण होकर रह जाना नहीं है, अधिक सार्थक जीवन जीना है। दोनों स्थानीय बोली का रचनात्मक प्रयोग करते हैं।'

6. उदाहरण देकर समझाइए कि 'रोज' कहानी में मध्यवर्गी स्त्री के जीवन यथार्थ का चित्रण हुआ है।

'रोज' कथा साहित्य में क्रान्तिकारी परिवर्तन के प्रणेता महान् कथाकार सचिदानन्द हीरानन्द वात्स्यायन "अज्ञेय" की सर्वाधिक चर्चित कहानी है। प्रस्तुत कहानी में संबंधों की वास्तविकता पर बात किया गया है। लेखक अपने दूर के रिश्ते की बहन मालती जिसे सखी कहना उचित है, से मिलने अठारह मील पैदल चलकर पहुँचते हैं। मालती और लेखक का जीवन इकट्ठे खेलने, पिटने और पढ़ने में बीता था। आज मालती विवाहिता है। एक बच्चे की माँ भी है । वार्तालाप के क्रम में आए उतार – चढ़ाव में लेखक अनुभव करता है कि मालती की आँखों में विचित्र – सा भाव है। मानो वह भीतर कहीं कुछ चेष्टा कर रही हो, किसी बीती बात को याद करने की, किसी बिखरे हुए वायुमंडल को पुनः जगाकर गतिमान करने की, किसी टूटे हुए व्यवहार तंतु को पुनर्जीवित करने की। मालती रोज कोल्हू के बैल की तरह व्यस्त रहती है। पूरे दिन काम करना, बच्चे की देखभाल करना और पति का इंतजार करना इतने में ही मानों उसका जीवन सिमट गया है। वातावरण, परिस्थिति और उसके प्रभाव में ढलते हुए एक गृहिणी के चरित्र का मनोवैज्ञानिक उद्घाटन अत्यंत कलात्मक रीति से लेखक यहाँ प्रस्तुत करते हैं। डॉक्टर पति के काम पर चले जाने के बाद का सारा समय मालती को घर में अकेले काटना होता है। उसका दुर्बल, बीमार और चिड़चिड़ा पुत्र हमेशा सोता रहता है या रोता रहता है। मालती उसकी देखभाल करती हुई सुबह से रात ग्यारह बजे तक घर के कार्यों में अपने को व्यस्त रखती है। उसका जीवन ऊब और उदासी के बीच यंत्रवत चल रहा है। किसी तरह के मनोविनोद, उल्लास उसके जीवन में नहीं रह गए हैं। जैसे वह अपने जीवन का भार ढोने में ही घुल रही हो। इस प्रकार लेखक मध्यवर्गीय भारतीय समाज में घरेलू स्त्री के जीवन और मनोदशा पर सहानुभूतिपूर्ण मानवीय दृष्टि केन्द्रित करते हैं। कहानी के गर्भ में अनेक सामाजिक प्रश्न विचारोत्तेजक रूप में पैदा होते हैं।कहानी के इस भाग में ही मालती के यन्त्रवत् जीवन की झलक मिल जाती है, जब वह अतिथि का स्वागत केवल औपचारिक ढंग से करती है। अतिथि उसके रिश्ते का भाई है, जिसके साथ वह बचपन में खूब खेलती थी। पर वर्षो बाद आए भाई का स्वागत उत्साहपूर्वक नहीं कर पाती, बल्कि जीवन की अन्य औपचारिकताओं की तरह 'एक और औपचारिकता निभा देती है। उसके व्यवहार में यंत्रवत् कर्त्तद्यपालन का भाव , झलकता है। कर्त्तव्यपालन में वह कोई कमी 'छोड़ती प्रतीत नहीं होती। वह अतिथि के लिए हाथ का पंखा भी झलती है, पर उसकी कुशल क्षेम पूछने का उत्साह तक नहीं दिखाती। उसके जीवन में उत्साह नहीं है, तो व्यवहार में भी उत्साहहीनता और मात्र औपचारिकता है। बचपन की बातूनी लड़की शादी के दो वर्षों बाद ही बुझ कर मौन हो गई। इस मौन को अतिथि भी परिलक्षित करता है। इसीलिए उसे कहानी के शुरू में ही लगता है कि उस घर में कोई काली छाया मँडरा रही है। यह काली छाया कहानी में कई स्थानों पर मैँडराती देखी जा सकती है। हम देखते हैं कि मालती अतिथि से-कुछ नहीं पूछती, बल्कि उसके प्रश्नों के संक्षिप्त उत्तर ही देती है। उसमें अतिथि की कुशलता या उसके वहाँ आने का उद्देश्य या अन्य समाचारों के बारे में जानने की कोई उत्सुकता नहीं दीखती। यदि पहले कोई उत्सुकता, उत्साह, जिज्ञासा

या किसी बात के लिए उत्कंठा थी भी तो वह दो वर्षों के वैवाहिक जीवन के बाद शेष नहीं रही। विगत दो वर्षों में उसका व्यक्तित्व बुझ सा गया है, जिसे उसका रिश्ते का भाई भाँप लेता है। अतः मालती का मौन उसके दम्म का या अवहेलना का सूचक नहीं; उसके वैवाहिक जीवन की उत्साहहीनता, नीरसता और यान्त्रिकता का ही सूचक है।

7. 'पाजेब' कहानी के आधार पर मध्यवर्गीय मानसिकता और बदल रहे नैतिक मूल्यों पर प्रकाश डालिए।

जैनेन्द्र ने पाजेब कहानी के माध्यम से नौकरीपेशा मध्यवर्ग की मानसिकता में आ रहे बदलाव की आरे संकेत किया है। शहरीकरण और पूँजी के बढ़ते हुए वर्चस्व के कारण मानवीय संबंधों में तेजी से बदलाव आने लगा था। नई कहानी के दौर के सभी लेखकों की रचनाओं में इस बदलते हुए जीवन संदर्भों को यथार्थवादी, मनोविश्लेषणवादी और व्यक्तिवादी दृष्टिकोण से जाँच-परख कर प्रस्तुत किया। जीवन डे मूल्यों के तेजी से बदलने का वह समय था। व्यक्ति का जीवन इतना सरल नहीं रह हिला गया था जैसा कि कुछ समय पहले तक वे तत्व मौजूद थे। आपसी संबंधों में संदेह काजेड : जैनेला खुभार और अविश्वास पैदा होने लग गया था। आर्थिक और राजनीतिक वबाव ने व्यक्ति- व्यक्ति के बीच संदेह का वातावरण तैयार कर दिया था। एक प्रकार के भय से आक्रांत मध्यवर्ग कई-कई आशंकाओं को अपने मन में पालने लग गया था। संयुक्त परिवार के विघटन ने मध्यवर्ग को भयाक्रांत कर दिया था। जीवन के आदर्शों से वह हटने लगा था। व्यवस्था में आए बदलाव ने आपसी रिश्ते-नातों पर भी आघात करना प्रारंभ कर दिया था। इन्हीं बदलते हुए संबंधों, आशंकाओं और संदेहों के माध्यम से जैनेन्द्र ने "पाजेब' के माध्यम से मध्यवर्गीय मानसिकता में आए बदलाव को चित्रित किया है। व्यवस्था के अंतर्विरोधों को उघाड़ने में पारिवारिक संबंधों के बीच आ बैठे संदेह ने पिता ने पुत्र पर दबाव डालकर न हुई चोरी को कबुलने के लिए मजबूर कर दिया। यहाँ केवल बेटे द्वारा एक अपराध होने की या चोरी करने की मात्र आशंका से मध्यवर्गीय नीति मुल्यों के दूटने की पीड़ा पिता को घेर लेती है। आशुतोष का प्रत्येक हाव-भाव, उसके दोस्त छुन्नू के साथ उसका पत्तंग उड़ाना आदि बाल सुलभ खेल को संवेह की नजर से देखा जाना, तत्कालीन समय में आर्थिक दबाव के कारण बदलते जीवन मूल्यों की ओर स्पष्ट संकेत करते हैं। नैतिक मुल्यों की वास्तविक शिक्षा बाल्यकाल में ही दी जानी चाहिए, इस समय बंड और पुरस्कार देकर बच्चों में इन मूल्यों का विकास किया जा सकता है जो एक बालक की प्रवृत्तियों के अनुकूल ही है। लेकिन जैसे ही दंड और पुरस्कार को कठोर अनुशासन के तौर पर इस्तेमाल किया जाएगा तो नैतिक विकास की दिशा विपरीत हो जाएगी। आशुतोष के माता-पिता एक विशिष्ट दायरे में घुमते हुए नजर आते हैं, सामाजिक यथार्थ से एकदम निरपेक्ष अपनी ही समस्याओं से घिरे हुए। उनका संघर्ष व्यक्ति के अंतर्मन में अधिक चलता है, सतह पर कम दिखता है। पाजेब खो जाने की घटना से परिवार के सदस्यों का चिंतित हो जाना स्वाभाविक है लेकिन जीवन की अन्य समस्याओं के प्रति उदासीन होकर केवल पाजेब की चोरी तक ही इसे सीमित किए जाने से यह केवल पारिवारिक समस्या बन कर रह जाती है। इसका सामाजिक पक्ष इसमें निहित नहीं है। सारा संघर्ष भीतरी है, व्यक्ति के मन के भीतर चलता है, समाज के भीतर नहीं। मध्यवर्ग की संकुचित दायरे में केवल अपने तहत् सोचने की मानसिकता का जैनेन्द्र ने वास्तविक चित्रण इस कहानी के माध्यम से किया है। जैनेन्द्र की यह विशेषता है कि व्यक्ति के मन के भीतर चलने वाले दंद्ध और उथल-पुथल को अभिव्यक्त करना, यही उनकी कहानी का लक्ष्य भी होता है। इसलिए "पाजेब' कहानी में केवल एक परिवार के आंतरिक संबंधों, आपसी मतभेद, उतार-चढ़ाव, व्यक्तिगत समस्याओं को ही महत्व

दिया गया है। कहानी में केवल एक घटना है और उसके इर्द-गिर्द सभी पात्र घुमते रहते हैं। घटना बहुलता नहीं है, सामाजिक सरोकारों को अभिव्यक्त करने या संबंध होने का जैसे कोई औचित्य ही नहीं है।

8. "यशपाल मूलत : मध्यवर्गीय लेखक हैं।" कुत्ते की पूछ" कहानी के आधार पर उदाहरण देकर स्पष्ट कीजिए।

यशपाल, एक प्रसिद्ध हिंदी लेखक, अक्सर एक ऐसे लेखक के रूप में माने जाते हैं जो मध्यम वर्ग के अनुभवों और चिंताओं को उजागर करते हैं। यह चरित्र चित्रण उनकी कहानी "द डॉग अक्स" ("कुट्टा पुछता है") में स्पष्ट है। कथा आम लोगों के जीवन, उनके संघर्षों, आकांक्षाओं और मध्यवर्गीय समाज की गतिशीलता की पड़ताल करती है। यहाँ कुछ उदाहरण दिए गए हैं जो यशपाल को एक मध्यवर्गीय लेखक के रूप में चित्रित करते हैं:

रोज़मर्रा की ज़िंदगी पर ध्यान दें: "द डॉग अक्स" इसके पात्रों के रोजमर्रा के जीवन के इर्द-गिर्द घूमती है, मुख्य रूप से एक छोटे शहर में रहने वाला एक मध्यम वर्गीय परिवार। यशपाल उनकी नियमित गतिविधियों, बातचीत और चिंताओं में तल्लीन हो जाता है। कहानी सामान्य मध्यवर्गीय अनुभवों जैसे वित्तीय बाधाओं, सामाजिक गतिशीलता और बेहतर जीवन की खोज पर प्रकाश डालती है।

सामाजिक वास्तविकताओं की परीक्षा: यशपाल का लेखन अक्सर सामाजिक वास्तविकताओं और मध्यम वर्ग के सामने आने वाले मुद्दों को दर्शाता है। "द डॉग अस्क्स" में, वह सामाजिक असमानता, भ्रष्टाचार और न्याय के लिए संघर्ष के विषयों की पड़ताल करता है। यह कहानी उन चुनौतियों पर प्रकाश डालती है जिनका सामना सामान्य व्यक्ति ऐसी प्रणाली को संचालित करने में करते हैं जो पक्षपातपूर्ण या अन्यायपूर्ण हो सकती है।

मध्यवर्गीय मूल्यों का प्रतिनिधित्व: "द डॉग आस्क्स" में यशपाल के पात्र मध्यवर्गीय मूल्यों जैसे कि कड़ी मेहनत, अखंडता और ऊपर की ओर गतिशीलता की आकांक्षाओं को मूर्त रूप देते हैं। नायक, एक शिक्षक, अपने पेशे के लिए समर्पित है और अपने छात्रों को ज्ञान प्रदान करने का प्रयास करता है। यशपाल का चित्रण परिश्रम और शिक्षा की खोज के मध्यवर्गीय लोकाचार को रेखांकित करता है।

आर्थिक दबावों की पड़ताल यशपाल के मध्यम वर्ग के चित्रण में आर्थिक चिंताएँ और वित्तीय संघर्ष प्रमुख हैं। "द डॉग अस्क्स" में, परिवार को वित्तीय कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, विशेष रूप से पिता के बीमार स्वास्थ्य के कारण। यशपाल चिकित्सा खर्चों के बोझ, वित्तीय प्राथमिकताओं को संतुलित करने की आवश्यकता और आर्थिक अस्थिरता के कारण व्यक्तियों और परिवारों पर पड़ने वाले दबाव पर प्रकाश डालते हैं।

आम पाठकों से जुड़ाव: यशपाल की लेखन शैली और विषयगत फोकस पाठकों की एक विस्तृत श्रृंखला के साथ प्रतिध्वनित होता है, जिसमें मध्यम वर्ग के लोग भी शामिल हैं। रोजमर्रा की चुनौतियों, आकांक्षाओं और दुविधाओं का उनका सूक्ष्म चित्रण परिचित और सापेक्षता की भावना

पैदा करता है। पाठकों के साथ यह जुड़ाव एक मध्यवर्गीय लेखक के रूप में उनके चरित्र चित्रण में योगदान देता है।

कुल मिलाकर, यशपाल की कहानी "द डॉग आस्क्स" दैनिक जीवन की खोज, सामाजिक वास्तविकताओं की जांच, मध्यवर्गीय मूल्यों का प्रतिनिधित्व, आर्थिक दबावों की जांच और आम पाठकों के साथ संबंध के माध्यम से एक मध्यवर्गीय लेखक के रूप में उनके चित्रण का उदाहरण है। ये तत्व उनके साहित्यिक कार्यों में मध्यवर्गीय अनुभव का एक सूक्ष्म और प्रामाणिक चित्रण प्रस्तुत करने के लिए गठबंधन करते हैं।

9. "ठाकूर का कुआँ' कहानी के आधार पर अस्पृश्यता की समस्या का वर्णन कीजिए।

प्रेमचंद ने इस कहानी के माध्यम से भारतीय जातिप्रथा की सबसे घृणित परंपरा अस्पृश्यता (छुआछूत) के कारण तिरस्कार, अपमान और मानवीय अधिकारों से वंचित जीवन जी रहे अछूतों की सामाजिक और आर्थिक स्थिति को अभिव्यक्त किया है। पानी के लिए तरसते अछुत जीवन की वास्तविकता की यह कहानी है।

भारतीय समाज में जातिप्रथा के कारण गैर-बराबरी, अभाव, विपन्नता, तिरस्कार, उत्पीड़न को सह रहे तमाम अछूत वर्ग की त्रासदी को जान सकेंगे। उस पर गहराई से सोच सकेंगे। इंसान ने ही जातिगत भेदभाव के आधार पर गैरबराबरी को बढ़ावा देकर उसे स्थायी रूप देने के लिए अनेकानेक धार्मिक, पारंपारिक, सनातनी ढकोसलों का सहारा लिया और किस प्रकार करोड़ों अछुतों को इन्सान होने के दर्जे से नीचे गिराकर गुलामों का जीवन जीने पर मजबूर किया, इस वास्तविकता को आप जान सकेंगे। अछूत गंगी को पानी के लिए जातिप्रथा और छुआछूत परंपरा की बाधाओं को पार करके, जीवन को दांव पर लगाना पड़ता है, इस सच्चाई से आप परिचित हो सकेंगे। गंगी की अछूत बस्ति में उनका अपना कुआं न होना अछूतों की गरीबी और आर्थिक विपन्नता की स्थिति को दर्शाती है। अछूत बस्ति आर्थिक रूप से इतनी विपन्न क्यों है? के सवाल को भी समझने में यह इकाई आपकी सहायता करेगी। अस्पृश्यता का व्यवहार करने वाले हिंदुओं से संघर्ष करने के स्थान पर गंगी का पलायन करना, समस्या का समाधान नहीं है, बल्कि जातिप्रथा और अस्पृश्यता निर्मूलन के लिए गंगी द्वारा कड़ा संघर्ष करने की आवश्यकता थी। इससे आप सहमत हो सकेंगे। प्रेमचंद आधुनिक युग के पहले महत्वपूर्ण लेखक है जिन्होंने दलित समस्या पर सर्वाधिक गहराई से विचार किया है। प्रेमचंद के समकालीन अन्य रचनाकारों में राहुल सांकृत्यायन और निराला ने भी दलित जीवन की भयावह त्रासदी को वाणी दी है, लेकिन सबसे सशक्त रचनाएँ प्रेमचंद ही दे पाए हैं। उन्होंने आधुनिक भारतीय समाज में जातिव्यवस्था के कारण अछूत माने गए दलित समाज के त्रासद अनुभवों को अपने रचना कर्म का विषय बनाया है। 'ठाकुर का कुआँ,' 'सद्गति .' 'दूध का दाम,' । 'कफन' आदि कहानियाँ दलित जीवन में व्याप्त अभाव, पीड़ा, उत्पीड़न और दर्द को अभिव्यक्त करती हैं। उनकी कहानियों में छुआछूत का विरोध स्पष्टतः सामाजिक और आर्थिक संदों के रूप में किया गया है। प्रेमचंद मानव-मानव के बीच समानता का पुरस्कार करते हैं, और विशिष्ट जातियों के जन्मगत विशेषाधिकारों का विरोध करते है। मनुष्य का स्थान अच्छे गुण और कर्मों के आधार पर निश्चित होना चाहिए न की जन्म के आधार पर। लेकिन हिंदू धर्म के जिस तर्क के कारण जातियों का विभाजन, विभिन्न जातियों के बीच रोटी-बेटी के व्यवहार का निषेध किया गया, और अछूतों के मानवाधिकारों को छीनकर उनका शोषण किया उच्च कही गई

जातियों को न केवल विशेषाधिकार दिए बल्कि उसकी सुरक्षा के लिए कानून बनाकर उन्हें कड़ाई से लागू किया जाता है। जातिव्यवस्था के तहत जन्मना जाति तय होने से व्यक्ति का न केवल सामाजिक दर्जा बल्कि व्यक्ति की आर्थिक स्थिति भी निश्चित हो जाती है। जाति के आधार पर पेशों का बंटवारा तथा उत्पादन के साधनों पर अधिकार या उससे वंचित किया जाना भी जातिव्यवस्था द्वारा निर्धारित होता है। इस सबके पीछे धर्म का आधार दिया गया है। ब्रह्मा के विभिन्न अंगों से जातियों की निर्मिति की मनगढंत झूठी कहानी जन्मना जाति निर्धारण के लिए उपयोग में लाई गई। अपने को श्रेष्ठ बनाएँ रखने के लिए इस झूठी कहानी को भाग्य, कर्मफल, पूनर्जन्म के झूठे तर्क का सहारा दिया गया।

अंधविश्वास और शिक्षा के अभाव में निम्न तबका इसे ही अपना प्रारब्ध समझता रहा। ज्ञान और शिक्षा के अधिकार से वंचित रखने का धर्म के ठेकेदारों का यह छल तब से लेकर आज तक सफल होता आ रहा है। इस धार्मिक छल-कपट, श्रेष्ठता के ढोंग, आर्थिक उत्पादनों पर इनके एकाधिकार और निम्न जातियों को मानवीय अधिकारों संचित किए जाने की साजिशों का पर्दाफाश प्रेमचंद ने अपनी कहानियों के माध्यम से किया है। 'ठाकुर का कुआं' कहानी अछूतों के मानव अधिकारों की पूर्ति बिना दयनीय स्थिति में जीने की त्रासदी को चित्रित करती है। वर्ण – जाति व्यवस्था जैसी अतीशय अमानुषिक रचना से हम सभी परिचित हैं। यह कोई अनायास नहीं है कि दलितों की स्थिति अत्यंत दयनीय है। गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली भारतीय जनसंख्या का साठ प्रतिशत हिस्सा दलित समुदाय है। वर्ण व्यवस्था ने समाज मे असमानता और श्रेणीनुमा ढांचा पैदा करके दलितों को सभी सुख सुविधाओं से वंचित रखा।कथित ऊँची जाति के कुओं से ये पानी नहीं ले सकते। इनका अपना कुआँ हो नहीं सकता कथित ऊँची जाति की दया पर निर्भर रहकर पानी के लिए तरसना ही इनके जीवन की त्रासदी है। घंटो याचना करने पर किसी सवर्ण का मन पसीजा तो दो चार बाल्टियों से मटके भर देंगे, वह भी एहसान जताते हुए और हजार गलियाँ देकर। पानी जैसी मानव जीवन की मूलभूत जरूरत, जो एक प्राकृतिक संपदा है। लेकिन सवर्णों ने सत्ता और संपत्ति के जोर पर इसे अपने वर्चस्व में कर लिया है। इस वर्चस्व का विरोध करने अथवा इस व्यवस्था को तोड़ने पर अछूतों को गाँव पंचायतों द्वारा अपमानित, उत्पीड़ित किया जाता है या इन्हें मार दिया जाता है। 'ठाकुर का कुआँ' दलितों की इसी गंभीर समस्या को उजागर करती है।

10. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए।

(क) जयशंकर प्रसाद की राष्ट्रीय भावना

प्रसाद जी की व्यापक राष्ट्रीय सांस्कृतिक चेतना का विश्वमंगल से विरोध न था। वे उत्पीड़न के विरोध में थे – द्वंद्वों से क्षुब्ध थे – विषमता रहित समाज की स्थापना चाहते थे। 'कामायनी' की मिथकीय सीमाओं में भी कर्म चेतना, संघर्ष चेतना, एकता जैसे तत्त्व हैं, जिनका महत्त्व राष्ट्रीय आंदोलन के लिए था।

इन पंक्तियों के द्वारा प्रसाद जी राष्ट्र को जागरण का संदेश देते हैं। नन्ददुलारे वाजपेयी का कहना है, "बीती विभावरी जाग री" शीर्षक जागरण गीत प्रसाद जी के संपूर्ण काव्य-प्रयास के साथ उनकी युग-चेतना का परिचायक प्रतिनिधि गीत कहा जा सकता है।" राष्ट्रीय चेतना का स्थूल रूप उनके नाटकों के गीतों, 'अरुण यह मधुमय देश हमारा' और 'हिमाद्रि तुंग श्रृंग से' में मिलता है। नाटकों के माध्यम से उन्होंने राष्ट्रीय चेतना का प्रसार किया। और जब वे कहते हैं – 'चित्राधार' में तो वे

यहां तक कहने का साहस कर गए कि उस ब्रह्म को लेकर मैं क्या करूंगा जो साधारण जन की पीड़ा नहीं हारता। 'आंसू' में भी विश्वमंगल की भावना की अभिव्यक्ति हुई है। सारांशतः हम यह कह सकते हैं कि प्रसाद जी का काव्य राष्ट्रीय काव्य, सांस्कृतिक जागरण का काव्य हैं। ये स्वाधीन चेतना के बल पर नई मानव परिकल्पना में सक्षम हैं। वह नई संबंध भावना का संकेत हैं। यहां राष्ट्रीयता का भाव संकुचित नहीं है, बल्कि विश्वमंगल हेतु है। 'कामायनी' आधुनिक जीवन-बोध का महाकाव्य है। इसमें संघर्ष करना सिखाया गया है। कर्म करना सिखाया गया है। विश्व-मंगल इसका मूल प्रयोजन है। उसकी मूल संकल्पना संकुचित राष्ट्रवाद के विरुद्ध है। मुक्तिबोध इड़ा को पूंजीवादी सभ्यता की उन्नायिका कहते हैं। इसमें संदेह नहीं कि श्रद्धा, जो रागात्मक वृत्ति का प्रतीक है, का आदर्शीकरण प्रसाद जी करते हैं। श्रद्धा मनु को जीवन में वापस लाती है। कर्म-क्षेत्र में आने से आनंद की प्राप्ति होती है। फिर भी इड़ा का जो व्यक्तित्व विधान है उसमें नई युग चेतना के सभी सकारात्मक तत्त्व वर्तमान हैं। तो वे समग्र विश्व तक राष्ट्रीय चेतना का प्रसार करते प्रतीत होते हैं। इसका क्लासिक उदाहरण है – 'कामायनी'। 'कामायनी' संकुचित राष्ट्रवाद से ऊपर उठकर विश्वमंगल वाली रचना है। वह संपूर्ण मानवजाति की समरूपता का सिद्धांत अपनाकर आनंद लोक की यात्रा का संदेश देती है।

(ख) किसानों के प्रति प्रेमचंद की दृष्टि

प्रेमचंद ने किसान को साहित्य का विषय बनाया। उनके कथा-साहित्य में किसान-जीवन के विभिन्न पक्षों का चित्रण हुआ है। भारत का सबसे बड़ा वर्ग किसान रहा है। किसान भारत की कृषि-संस्कृति का मूलाधार है। किसान के बिना भारतीय संस्कृति का कोई भी विश्लेषण अधूरा होगा। यह बात बार-बार दुहराई गई है कि भारत एक कृषि-प्रधान देश है। प्रेमचंद ने इस कृषि-व्यवस्था के कर्ता-धर्ता किसान को अपने उपन्यासों और कहानियों का मुख्य विषय बनाया। उनके पहले तथा उनके बाद किसी भी रचनाकार ने इतने विस्तार से किसान को आधार बनाकर हिंदी में साहित्य-सृजन नहीं किया। डा. रामविलास शर्मा ने प्रेमचंद की रचनाधर्मिता के इस पक्ष को रेखांकित किया है, "हिंदी में किसानों की समस्याओं पर ज़्यादा उपन्यास लिखे ही नहीं गए, जो लिखे भी गये हैं, उनमें प्रेमचंद की सूझबूझ का अभाव है।" किसान-जीवन के साथ तालमेल बनाते हुए प्रेमचंद ने जो रचा वह हिंदी के लिए एकदम नया था, "उन्होंने उस धड़कन को सुना जो करोड़ों किसानों के दिल में हो रही थी। उन्होंने उस अछूते यथार्थ को अपना कथा-विषय बनाया, जिसे भरपूर निगाह देखने का हियाव ही बड़ों-बड़ों को न हुआ था।"किसान के जीवन को 'भरपूर निगाह' से देखने तथा लिखने के कारण ही, " 'प्रेमाश्रम' किसान-जीवन का महाकाव्य है। उसमें उस जीवन का एक पहलू नहीं दिखाया गया, वह एक विशाल नदी की तरह है जिसमें मूल धारा के साथ आसपास के नालों का पानी, जड़ से उखड़े हुए पुराने खोखले पेड़ और खेतों का घासपात भी बहता हुआ दिखाई देता है।"प्रेमचंद के योगदान की घोषणा करती यह पंक्ति ध्यान देने योग्य है", 'प्रेमाश्रम' और 'कर्मभूमि' के साथ 'गोदान' हिंदुस्तानी किसानों के जीवन की बृहतत्रयी समाप्त करता है।"

प्रेमचंद के उपन्यासों और कहानियों के बारे में यह बात सर्वमान्य है कि उनमें सर्वाधिक प्रमुखता से किसान-जीवन को ही विषय बनाया गया है। हिंदी आलोचना में यह बात अच्छी तरह पहचानी गयी है कि प्रेमचंद ने किसानों के शोषण-उत्पीड़न को न केवल चित्रित किया है, बल्कि इनके विरोध की चेतना को भी पकड़ा है। किसानों के विद्रोही तेवर की चर्चा रामविलासजी ने अनेक बार की है। किसानों के शोषकों की पहचान सामंतों, पुरोहितों एवं महाजनों के रूप में की गयी है। प्रेमचंद

किसान की समस्या के व्यवस्थागत कारणों की तलाश करते हैं। रामविलासजी बहुत बारीकी के साथ अर्थव्यवस्था, साम्राज्यवाद, उपनिवेशवाद, सामंतवाद-पुरोहितवाद आदि व्यवस्थागत पक्षों को ध्यान में रखकर प्रेमचंद के साहित्य को समझने-समझाने का प्रयास करते हैं।

प्रेमचंद के किसानों की पहचान मार्क्सवादी शब्दावली में बताई गई है कि वे सीमांत किसान हैं। ऐसा किसान जिसके पास कम ज़मीन है। वह परिवार की मदद से खेती करता है। पाँच बीघे के आसपास की खेती का वह मालिक भी होता है और श्रम करने वाला किसान भी। उसकी हैसियत इतनी नहीं होती कि अपनी खेती के लिए मजदूर रख सके। जीवन की कठिन परिस्थितियों में प्रायः उसे कर्ज़ लेना पड़ता है। गाँव की महाजनी पद्धति से उसे कर्ज़ मिलता है, जिसके सूद की दर जानलेवा होती है। 'सवा सेर गेहूँ' में प्रेमचंद ने कर्ज़ की इस पद्धति के भयानक रूप को कहानी में ढाला है।

प्रेमचंद का यही किसान भारत को कृषि प्रधान देश बनाता है। आज़ादी के पहले भारत की अर्थव्यवस्था, समाजव्यवस्था और धर्मव्यवस्था को बनाने में गाँवों की भूमिका आज की अपेक्षा ज़्यादा बड़ी थी। इन गाँवों में रहनेवाली शत प्रतिशत आबादी कृषि-व्यवस्था पर आश्रित थी। गाँव की इस आबादी के बारे में ये नहीं कहा जा सकता कि ये सभी किसान थे। प्रेमचंद के सभी ग्रामीण पात्र किसान नहीं हैं। यद्यपि सभी ग्रामीण आश्रित थे कृषि-व्यवस्था पर ही, पर सबको किसान नहीं कहा जा सकता। ग्रामीण आबादी की पहचान वर्गों में बाँटकर की जा सकती है। ऐसा एक वर्गीकरण आचार्य रामचंद्र शुक्ल के द्वारा किया हुआ भी मिलता है। कृषि और व्यापार से जुड़े वर्गों के अंतर पर विचार करते हुए वे लिखते हैं, "भूमि ही यहाँ सरकारी आय का प्रधान उद्गम बना दी गई है। व्यापार श्रेणियों को यह सुभीता विदेशी व्यापार को फलता-फूलता रखने के लिए दिया गया था, जिससे उनकी दशा उन्नत होती आयी और भूमि से संबंध रखने वाले सब वर्गों की- क्या जमींदार, क्या किसान, क्या मजदूर- गिरती गयी।